CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

S.3

काशीस्थ

निगमागम दरभङ्गा विद्यालय

का संक्षिप्त इतिहास

एवं

आथर्वणशान्तिः

...य-ग्रन्थालय,
...रतनिवि, जयोगी
वाराणसी-५

ग्रन्थालय
दी, वाराणसी-५
क्र 4/23

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री सीतारामचन्द्र स्मृति लेखमालाया प्रथमं पुष्पं

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

॥ श्रीः ॥

काशीस्थ

निगमागम दरभङ्गा विद्यालय

का

संक्षिप्त इतिहास

एवं

आथर्वणशान्तिः

लेखक—
पं० नारायण शास्त्री रटाटे 'अथर्ववेदमार्तण्ड'
अथर्ववेदाध्यापक
दरभङ्गा विद्यालय, वाराणसी।

सम्वत् २०२६] [मूल्य–१·००

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रकाशक: —

श्री सीतारामचन्द्र लेखमाला प्रकाशन
के० २२/४८ दुर्गाघाट,
वाराणसी ।

सूरज प्रस
राजेश प्रिंटिंग
त्रिलोचनघाट, वार

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, कर्दळी
वाराणसी-5

(सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन)

॥ प्राप्तिस्थान ॥

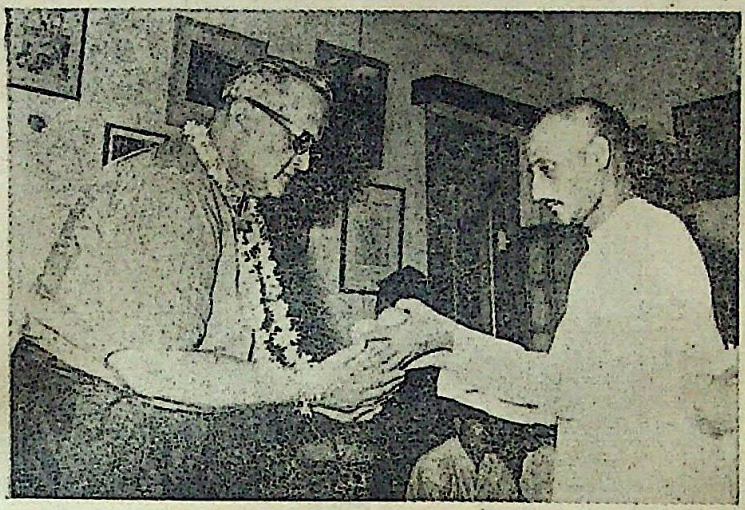
१—निगमागम दरभङ्गा संस्कृत विद्यालय
नीलकंठ, वाराणसी

२— श्री नारायण रामचन्द्र रटाटे
के० २२/४८ दुर्गाघाट, वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थाला
प्रतिनिधि, काशी
आदानसे



दिल्ली प्रदेश के उप राज्यपाल
डा० आदित्यनाथ झा का सम्मान
करते हुए।
पं० नारायण शास्त्री रटाटे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri



रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ।
रामाय श्रीकृष्ण पुत्राय सीतायाः पतयेनमः ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"समर्पणम्"

नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय देव्यैच तस्यै जनकात्मजायै।
नमोऽस्तु रुद्रेन्द्रयमानिलेभ्यो नमोऽस्तु चन्द्रार्कमरुद्गणेभ्यः॥

आज यत् किंचित् वाक् पुष्पाञ्जलि पितृ चरणों में अर्पित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। मनुष्य इस संसार में तीन ऋणों से युक्त होकर जन्म ग्रहण करता है—देव, ऋषि, पितृ। इन तीन ऋणों से उसकी मुक्ति तभी होती है जब वह स्वाध्याय, यज्ञ, तर्पण करता है। वैसे तो माता, पिता, गुरु के ऋण से मुक्त होना बड़ी कठिन बात है। गुरु, पिता, से माता का ऋण अधिक होता है इसलिये इन तीनों में माता अधिक वंदनीय कही गई है यथा— "पितुर्वन्द्याहि मस्करी" और पुत्र भी वही कहलाता है यथा—

पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मात् पितरं त्रायते सुतः।
तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा।
पुत्रशब्देन चैतद्धि नरकात्त्रायते पिता।

पुत्र का पुत्रत्व भी इसी में कहा है जैसे—

यच्च पुत्रः पुन्नाम नरकमनेक शततारं तस्मात्
त्रातीति पुत्रस्तत् पुत्रस्य पुत्रत्वम् (गो० ब्रा०)

मनु ने भी पुत्रता तीन प्रकार से कही है—

जीवतो वाक्य करणात् क्षयाहे भूरि भोजनात्।
गयायां पिंडदानाच्च त्रिभिः पुत्रस्य पुत्रता॥ (म० स्मृ०)

पुत्र भी तीन प्रकार के कहे हैं—

अनाज्ञप्तोऽपिकुरुते पितुः कार्यं स उत्तमः।
उक्तः करोति यः पुत्रः समध्यम उदाहृतः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उक्तोऽपि कुरुते नैव स पुत्रो मल उच्यते। (अ० रा० अ० कां०)

माता पिता गुरु की सेवा करना, उनकी आज्ञा का पालन करना, यही पुत्र का सर्वश्रेष्ठ धर्म है। पितृ चरणों ने जीवित् अवस्था में ही स्वर्गापवर्ग प्राप्त कर लिया था, जैसे—

"पुत्रेव लोकाँजयतीति श्रुतिः" "स्वर्गकामं यजेत्"

तथा उन्हीं के मुखारविन्द से निरन्तर निकलती वेद वाणी के आधार से —

"दैवात् प्राप्तं महद्दुखं इदानीं नास्ति वैभयम्" "कर्मरेषा नाशकर्त्री" "देव्याः पार्श्वतरो भवेत्" "कर्मब्रह्म स्वरुपिणे, स्वर्गापवर्ग दात्रोज,"

ऐसे जिन महापुरुष से यह षाट्कौशिक देह प्राप्त कर अपने धर्म से च्युत रहा तथापि जिनकी शिक्षा, दीक्षा, आशिर्वाद, से जीवन यापन करने में समर्थ हो सका। आज उन्हीं की "स्मृति" में यह अल्प "वाक्पुष्प रूप "आथर्वणशांति" तथा "संक्षिप्त इतिहास" सादर उनके चरण कमलों में अर्पित है।



Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

उपक्रमः

"श्री सीता रामचन्द्र स्मृति" लेखमाला के प्रथम पुष्प के रूप में "निगमागम दरभंगा विद्यालय का संक्षिप्त परिचयात्मक इतिहास" तथा "आथर्वण शांतिः" प्रस्तुत है। इसके लिये एक वचन भी मिलता है— "अल्पारंभा क्षेमकराः"। यह प्रेरणा स्रोत निकलने का भी एक कारण है, प० पू० आहिताग्नि स्व० पं० रामचन्द्र शास्त्री रटाटे, प्रथम वैदिक सम्मानित प्राध्यापक-वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के त्रयोदशाह के उपरान्त काशी के वैदिक तथा शास्त्रीय विद्वानों का पूजन तथा समादर किया गया। इस अवसर पर स्वर्गीय श्री रटाटे जी की प्राचीन वैदिक अध्ययन-अध्यापन परम्परा को चालू रखने के लिये विद्वानों द्वारा उनकी स्मृति में सीतारामचन्द्र वेद विद्यालय स्थापित करने का सुझाव दिया गया। तदनुसार प्रतिज्ञा संकल्प होकर तात्कालिक कार्य प्रारंभ कर दिया गया। साथ में एक "लेखमाला" की भी योजना बनी जिसके अन्तर्गत रटाटे जी से संबन्धित तथा वैदिक साहित्य एवं वेद में विज्ञान, अथर्ववेद में शोध, इत्यादि कार्य करने का निश्चय हुआ। इस कार्य में जबतक तन, मन, धन, से सहायता नहीं प्राप्त होती, तब तक यह कार्य योग्य प्रकार से चलना असंभव है, तथापि मै स्वयं अपनी शक्ति के अनुसार कार्य संपन्न करने की चेष्टा करता आ रहा हूँ। उनको वेदाङ्ग एवं अमरकोष, अष्टाध्यायी इत्यादि अधिक प्रिय थे अतः इस विद्यालय में वेद शास्त्र की प्रारंभिक शिक्षा तथा अथर्ववेद को प्राथमिकता दी जाती है। वेदाङ्ग से वेदों का संरक्षण, वेदों के संरक्षण से ही हमारी भारतीय संस्कृति का रक्षण हो सकता है। अपनी संस्कृति के रक्षण से ही हम उन्नति एवं उत्कर्ष कर सकते हैं, अन्यथा अन्य देशों के खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, का अनुकरण करने से आज हम अपने स्वरुप ज्ञान को भूलकर, कर्तव्य कर्म से च्युत होकर गर्त्त की तरफ बढ़ रहे हैं। जिस देश का जैसा वातावरण हो, जलवायु हो, उसी के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुकूल आचरण, व्यवहार रखने से कल्याण हो सकता है अन्यथा महान कष्ट प्राप्त होता है। वैसे तो 'भाषा ज्ञान' सर्वसामान्य को होना चाहिये जिससे आज के विज्ञान में सहायक होकर हम आगे बढ़ सकते हैं, और हम सत्य स्वरूप ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। भारतवर्ष में प्राचीन समय में भी भाषा एवं लिपिज्ञान रखते थे, यथा—भूदेवपुत्रः शिवशर्मा माथुरः भाषाश्च नानादेशानां लिपी-र्ज्ञात्वा विदेशजाः। (स्क० पु०)

अतः मूल का संरक्षण होने से ही शाखायें पल्लवित-पुष्पित एक फलित हो सकती हैं। आज विद्या-विद्यालय निरंकुश से हो रहे हैं। इसका एकमेव कारण है "जड़" मजबूत नहीं। नहीं तो इसी काशी में वीथि-वीथि में विद्यालय थे, विद्यानां सदनं काशी...विद्यानां निलयं काशी, श्रुतिघोषोहि सर्वत्रः शास्त्र वादः पदेपदे। अध्ययन-अध्यापन होता था, अंकुशता थी। चींटी छोटी होती है परन्तु हाथी को प्राणान्तक कष्ट देनेवाली होती है। उसी प्रकार इस विद्यालय की रूप-रेखा तो छोटी हैं परन्तु ध्येय महान् है। इस गणतंत्र राज्य, में जनता जनार्दन के साहाय्य से ही यह कार्य सफल हो सकता है, कहा है—

धर्मार्थं च यदा चित्तं न वित्तं सुलभं तदा।
यदा वित्तं न च तदा चित्तं धर्मोन्मुखं भवेत्॥
चित्तवित्ते यदा स्यातां सत्पात्रं न तदालभेत्।
एतत्त्रितयसंबंधो यदाकालेतु संभवेत्।
अविचार्य तदा धर्मं यः करोति स बुद्धिमान्॥

"विद्या धर्मेण शोभते"

—०—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थ
वाराणसी

दो शब्द

परम पूज्य प्रातः स्मरणीय स्व० पिता जी के प्रति सांवत्सरिक श्राद्धतिथि पर आश्विन शुक्ल द्वादशी को, एक लेख रूप में वाक्पुष्प अर्पित करने का निश्चय किया गया। तदनुसार "श्री सीताराम स्मृति लेख माला" प्रकाशन का निश्चय हुआ। अतः यह उनके तृतीय वार्षिकी पर प्रथम पुष्प अर्पित है।

लेखक का यह प्रथम प्रयास है। इसमें अपना कुछ भी नहीं है। जो कुछ है वह पूज्य पिता जी का ही आशीर्वाद है।

इस पुस्तक को तैयार करने में मुझे जिन महापुरुषों की कृतियों से प्रेरणा मिली है उनके प्रति मैं कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। मेरे मित्र श्री कौस्तुभानन्द पाण्डेय जी भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके प्रकाशन की समुचित व्यवस्था करवाई। इसके अतिरिक्त वे सभी लोग धन्यवाद के पात्र हैं जिनसे मुझे इस कार्य में कुछ भी मदद मिली है। प्रथम प्रयास होने के कारण सम्भवतः कुछ त्रुटियाँ रह गयी हों। अतः पाठकों के प्रत्येक सुझाव का स्वागत् होगा। इस लेखमाला का आगामी लेख होगा "अथर्ववेदे काण्ड विमर्शः।"

किमत्यधिकम्।

लेखक

काशी

आश्विन शुक्ल द्वादसी, सं० २०२६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आमुख

अथर्ववेदाध्यायी श्री नारायणशास्त्री जी रटाटे, वाराणसी के एक प्रसिद्ध विद्वान् हैं। आपने अपने परमपूज्य पिताश्री के नाम से 'श्री सीतारामचन्द्र स्मृति' नामक लेखमाला निकालने का निश्चय किया है। वर्तमान युग में जब कि छपाई के कागज के तथा अन्य सब दर मनमाने बढ़ रहे हैं, यह साहस सुलभ नहीं है। पर 'अंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयंति' के न्याय से आपने अल्पारंभ ही क्यों न हो, पर लेखमाला शुरू कर ही दी है और क्षेमकर आथर्वण शांति के साथ इसका शुभारंभ हो रहा है।

इस प्रथम पुष्प के प्रथम भाग में 'निगमागम दरभंगा विद्यालय का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। यह विद्यालय काशी का एक पुराना विद्यालय है और इसकी स्थापना महर्षि श्री विशुद्धानंदजी की प्रेरणा से दरभंगा नरेशों ने की है। इसके सर्वप्रथम शिक्षक स्व० श्री शिवकुमार शास्त्रीजी थे। बाद में वहाँ स्व० श्री तात्या शास्त्री पटवर्धन, स्व० पंडित बाबू दीक्षित जड़े, इत्यादि ने भी अध्यापन कार्य किया। इसी परंपरा में लेखक के पू० पिता श्री रामचन्द्र शास्त्री रटाटे की भी नियुक्ति हुई। दरभंगा संस्थान स्वतंत्र था तबतक यह विद्यालय भलीभाँति दरभंगा नरेशों की कृपा से चलता रहा। पर आजकल उसकी दयनीय दशा है।

इस विद्यालय में थोड़े दिन पढ़ने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ था। विद्यालय का परिचय पढ़ते-पढ़ते पुराने पंडितों की स्मृतियाँ जाग उठीं और अतीत तथा वर्तमान का अंतर स्पष्टता से दृष्टिगोचर हुआ। कहाँ वे काशी के प्रकाण्ड पण्डित, जिनकी प्रखर प्रतिभा के सामने बड़े-बड़े भारतीय पंडित हतप्रभ हो जाते थे और कहाँ आज के थोथे पंडित जो इधर उधर से कुछ थोथी बातें बटोर अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाते हैं। यह सब विकराल काल की महिमा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किन्तु आनन्द का विषय है कि अब उस प्राचीन परंपरा के पंडित जो बचे हैं, उनका ध्यान अपना ज्ञान मुद्रित ग्रंथनिविष्ट करने की ओर गया है। यह पुष्प उसी प्रयास का फल है। इसका नाम है आथर्वण शांति। प्रायः अथर्ववेद का नाम लेते ही लोगों के मन में अभिचार की कल्पना मुदित होती है। पर अथर्ववेद का अत्यल्प भाग ही इस कर्म के लिये उपयुक्त किया जाता है। अधिकांश भाग है भैषज्य और शांति कर्म। शांति की पुकार आजकल दुनिया भर में चल रही है। पर केवल पुकार से शांति कैसे हो सकती है? उसके लिये ईश्वरी कृपा की आवश्यकता है। उस कृपा के लिये मंत्र शक्ति और शांति मंत्र विशेषतः अथर्ववेद में ही पाये जाते हैं। किन्तु आजकल उस वेद का ज्ञान अधिकाधिक कम हो रहा है और इस अवस्था में श्री रटाटेजी का यह प्रयास अधिक सराहनीय है।

इस माला के पुष्पों को अधिक सौरभ युक्त करने की दृष्टि से एक सूचना देना अत्यावश्यक है। आजकल के पोथी युग में केवल पुराने ग्रंथों के उद्धरण देने से काम नहीं चलता है। लेखक ने कई जगह उद्धृत ग्रंथों के वाक्य दिये हैं। पर वे पर्याप्त नहीं। केवल स्कंदपुराण, या अन्य किसी पुराण का नाममात्र देने से वर्तमान पाठकों का समाधान नहीं होता। उनके लिये विशिष्ट अध्याय तथा विशिष्ट श्लोक की संख्याका भी निर्देश करना आवश्यक रहता है। कहीं कहीं लेखक ने ऐसा किया भी है। पर वही प्रथा सर्वत्र अपनाई जानी उचित जान पड़ती है। आशा है अगले पुष्पों को जनता के संमुख रखते हुए, शास्त्रीजी इस बात का ध्यान अवश्य रखेंगे।

मैं मनः पूर्वक इस माला का स्वागत करता हूँ और 'प्रत्यंगिरावा' भगवती से प्रार्थना करता हूँ कि यह प्रयास पूर्णतया सफल हो।

काशी
आश्विन शुक्ल द्वादशी,
सं० २०२६

—साहित्याचार्य पंडित हरि रामचंद्र दिवेकर
एम्० ए० (इलाहाबाद),
डी० लिट् (पेरिस)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रशस्तिः

वन्देऽरविन्दसमधिष्ठित पादपद्मां-
कुन्देन्दुसुन्दररुचिं जगदेकवन्द्याम् ।
अर्द्धेन्दुमण्डलसमुल्लसदुत्तमाङ्गीं
पूर्णेन्दुबिम्बवदनां वचनाधिदेवीम् ॥ १ ॥

अकबरधरणीशप्राप्तवैदेहदेश-
क्षितिपरिवृढभावः शास्त्रविज्ञानशेषः ।
तनुवचनमनोभिस्सर्वदाराधितेशः
कुमुदधवलकीर्त्तिः श्रोत्रियोऽभून्महेशः ॥ २ ॥

तपस्विताभोगमवाप्य पूर्णं नरेन्द्रताभोगसमाह्वयैव ।
विहाय कैलासनिवासमीशस्तद्वंशजोऽभूद्भुवि रुद्रसिंहः ॥ ३ ॥

खण्डवलाकुलकमल दिनेशो निजवैभवजितसकलनरेशः ।
समजनि रञ्जितसज्जनसङ्घः पुत्रस्तस्य महेश्वरसिंहः ॥ ४ ॥

तत्पुत्रः कुलपङ्कज।लितरणिर्भूलोकभूषामणि-
र्द्धर्म्माचारजितद्युलोकसरणिः सन्नीतिमार्गारणिः ।
श्रीलक्ष्मीश्वरसिंहनामनृमणिर्भूपालचूडामणि-
र्द्धीमान्राजति सत्प्रतापतरणिस्सर्वार्थचिन्तामणिः ॥ ५ ॥

———

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तं मन्महे महेशानं महेशान प्रियाभंकम् ।
गणेशान करिगणेशानानन मनामयम् ॥

परिचयात्मक इतिहास

काशी में निगमागम दरभङ्गा विद्यालय अत्यन्त प्राचीन विद्यालय हैं। इसकी स्थापना १००८ महर्षि स्वामी श्री विशुद्धानन्द जी के आदेश से तत्कालीन महाराजाधिराज दरभङ्गानरेश श्रीलक्ष्मेश्वर सिंह के आदेश से हुयी। इसकी स्थापना का विवरण कुछ इस प्रकार मिलता है :—

जिस समय प्रातः स्मरणीय श्री विशुद्धानन्द जी का चतुर्दिक सुयश फैला था और उनके त्याग, तेज और तप के प्रभाव के कारण अनेकानेक सामंत उनकी शिष्यता स्वीकार कर चुके थे। कई एक नरेश केवल उनके श्री चरणों का दर्शन करने काशी आया करते थे। दरभङ्गा नरेश श्री लक्ष्मेश्वर सिंह भी उनके अनन्य भक्त थे। उन्होंने स्वामी जी की सेवा के निमित्त पचास रुपया मासिक प्रदान करना चाहा, लेकिन स्वामी जी ने अपने लिये द्रव्य की अनावश्यकता बतलाते हुए देय द्रव्य से काशी में एक संस्कृत पाठशाला खोलने का दरभङ्गा नरेश को आदेश दिया। महाराज को आदेश शिरोधार्य हुआ। इस प्रकार काशी की अत्यन्त प्राचीन संस्था दरभङ्गा पाठशाला की स्थापना हुई। इसमें काशी के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं वेदाचार्यों ने अध्यापन काय किया। इनमें प्रमुख थे—स्व० म. म. पं. श्री शिवकुमार शास्त्री, स्व० म. म. पं० श्री रामकृण शास्त्री पटवर्धन (तात्या शास्त्री), एवं वेदशास्त्र सम्पन्न वेदमूर्ति आहिताग्नि स्व० रामचन्द्र शास्त्री रटाटे आदि।

पं० श्री शिवकुमार शास्त्री पहिले बनारस गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज में थे। यहां इन्होंनेचार वर्ष तक अध्यापन कार्य किया। चारवर्ष के बाद इनका सम्बन्ध यहाँ से छूट गया। जीविका के अभाव में थोड़ा समय कष्ट से व्यतीत हुआ। इसी बीच एक बारात में शास्त्री जी को दरभङ्गा जाना पड़ा दरभङ्गा नरेश महाराजाधिराज रामेश्वर सिंह जी को राजसभा में इन्होंने वहाँ के पण्डितों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से शास्त्रार्थ किया। इनके विलक्षण पाण्डित्य से नरेश पूर्ण प्रभावित हुए। फलतः श्री महाराज ने एक सहस्त्र मुद्रा इन्हें पारितोषिक के रूप में दी और अपनी सभा का सम्मानित पण्डित इन्हें बनाया। राजकोष से आपको पचास रुपया प्रतिमास मिलने लगा। इस प्रकार एक वर्ष तक शास्त्री जी वहाँ सकुटुम्ब रहे।

परन्तु शास्त्री जी को काशी का वियोग सह्य नहीं हुआ। अतः आपने महाराज से प्रार्थना की—श्रीमान्! यद्यपि आपकी छत्रछाया में मैं यहाँ सकुटुम्ब आनन्द के साथ जीवन यापन कर रहा हूँ, यद्यपि शैशवकाल से ही जननी जनक के रूप में समाराधित काशीपुराधीश्वर भगवान विश्वनाथ और विश्वेश्वरी माँ अन्नपूर्णा के प्रतिदिन दर्शन के सौभाग्य से वंचित रहकर मेरा मन यहाँ पर सन्तुष्ट नहीं हो पता। अतः मुझे काशी जाकर उस पाठशाला में अध्यापन की अनुमति दी जाय। इस प्रकार शास्त्री जी का काशी प्रेम जानकर धर्मनिष्ट लक्ष्मेश्वर महाराज सिंह ने उनकी प्रार्थना को सहर्ष स्वीकार किया। पचास रुपया मासिक पर शास्त्री जी पाठशाला में अध्यापन कार्य करने लगे।

महाराज लक्ष्मेश्वर सिंह का शिवसायुज्य होने पर श्री रामेश्वर सिंह सिंहासनासीन हुए तो उन्होंने शास्त्री जी का वेतन पचहत्तर रुपया मासिक कर दिया। शास्त्री जी ने दरभङ्गा विद्यालय की यशः कीर्ति को फैलाने में अपना जीवन बिता दिया। जब लार्ड कर्जन भारत के वायसराय नियुक्त हुए तब दरभङ्गा नरेश श्री रामेश्वर सिंह ने उनका अभिनन्दन करने के लिए कलकत्ते की अपनी कोठी में एक महान् उत्सव का आयोजन किया। पण्डित समाज के अग्रणी होने के नाते शास्त्री जी को भी अपने जीवनदाता के आग्रह पर कलकत्ता जाना पड़ा। शास्त्री जी की विद्वत्ता का सुयश वहाँ पहिले ही पहुँच चुका था।

कलकत्ता विश्वविद्यालय के कुलपति श्री आशुतोष मुखर्जी ने म. म. पं० प्रमथनाथ जी तर्कभूषण द्वारा उनसे सविनय कहलवाया कि वे पांच सौ रुपया मासिक पर कलकत्ता विश्वविद्यालय में अध्यापक का पद स्वीकार कर लें। किन्तु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपने काशी प्रेम के कारण शास्त्री जी ने उनकी प्रार्थना को अस्वीकृत कर दिया। इसके पीछे उनका काशी प्रेम और पण्डित समाज के बीच बने रहने की भावना दोनों ही थी। शास्त्री जी का यह त्याग अनुकरणीय है।

शास्त्री जी की रचनाओं में दो मुख्य काव्य हैं—१—यतीन्द्र जीवन चरितम्, २—लक्ष्मीश्वर प्रताप।

इस विद्यालय से सम्बन्धित दूसरे विद्वान् श्री रामकृष्ण शास्त्री पटवर्धन के बारे में हमें निम्न विवरण मिलता है—

जिस समय काशी में गुरु बाल सरस्वती श्री बालाशास्त्री रानाड़े इनकी प्रखर प्रतिभा और तेज तथा पाण्डित्य को देखकर प्रसन्न हो उठे तो उन्होंने इन्हें यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया। इनकी प्रतिष्ठा बढ़ने लगी। वाद विवाद तथा सभाओं में जा-जा कर इन्होंने प्रतिद्वन्दियों को परास्त करना प्रारम्भ किया। इनकी ख्याति को सुनकर श्री लक्ष्मेश्वर सिंह ने इनकी नियुक्ति दरभङ्गा पाठशाला में कर दी। यहाँ रह कर इन्होंने अपने अध्यापन कौशल और पाण्डित्य के द्वारा समाज में और भी अधिक ख्याति प्राप्त की। उस समय गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज के अध्यक्ष श्री थीबो साहब थे। उन्होंने इन्हें सादर आमन्त्रित कर व्याकरण तथा दर्शनाध्यापक के पद पर नियुक्त कर दिया। यहाँ इनकी प्रतिष्ठा और बढ़ी तथा सन् १९०९ में सरकार द्वारा इन्हें महामहोपाध्याय की पदवी मिली। इसी प्रकार साहित्याचार्य पं० अम्बिकादत्त व्यास जी का भी सम्बन्ध दरभङ्गा नरेश व दरभङ्गा विद्यालय से रहा। इस प्रकार के उद्भट विद्वानों के द्वारा दरभङ्गा विद्यालय की ख्याति चारों ओर फैली।

विद्यालय की पुनः स्थापना—प्रारम्भ में दरभङ्गा विद्यालय सरस्वती फाटक के पास, जहाँ आजकल बालक्रीड़ा केन्द्र है, राज्य की निजी भूमि न होने के कारण किराये के स्थान में ही विद्यालय चलता था। परन्तु कुछ समय के बाद व्यवस्था ठीक न होने के कारण विद्यालय यहाँ से उठकर दरभङ्गा (लोहना) चला गया। उस समय इस विद्यालय में जो अध्यापक थे वे सब टीकमणि तथा गवर्नमेन्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संस्कृत कालेज आदि में चले गये। लेकिन विद्वानों को इस विद्यालय का अभाव खटका और इसको पुनःस्थापना का प्रयास किया जाने लगा। परन्तु स्थानाभाव के कारण विद्यालय काशी नहीं आ सकता था। कुछ समय तक ऐसी ही परिस्थिति चलती रही।

कुछ समय के बाद महाराज दरभङ्गा नरेश श्री रामेश्वर सिंह काशी पधारे। पं० गुलाब झा ने महाराज से आग्रह किया। महाराज ने तत्काल विद्यालय खोलने की अनुमति दे दी। महाराज ने अध्यापकों की नियुक्ति का आदेश देते हुए कहा कि महाराजाधिराज रुद्रेश्वर सिंह के नाम से स्थापित यह प्राचीन दरभङ्गा विद्यालय अब निगमागम दरभङ्गा वेद विद्यालय होगा। साथ ही दुर्लभ वेदों के अध्यापकों को नियुक्ति का आदेश दिया। दूसरे ही दिन विद्यालय प्रारम्भ करने के लिये पं० गुलाब झा योग्य वैदिकों की खोज में निकले। साथ में रुद्रेश्वर महादेव के पुजारी प० ठोठर मिश्र भी थे।

सर्व प्रथम ये लोग रामघाट स्थित साङ्गवेद विद्यालय में पहुँचे। वहाँ उस समय के काशी के प्रसिद्ध विद्वान, श्रोत-स्मार्त प्रवीण आहिताग्नि वेदमूर्ति प० श्री रामभट्ट जी रटाटे से इनका परिचय हुआ। श्री रटाटे जी वहाँ अथर्ववेद के अध्यापक थे। प्रसङ्गवश अध्यापकों की नियुक्ति की बात हुई। इस प्रकार ऋग्वेद के अध्यापक के पद पर पं० बाबू दीक्षित जड़े की नियुक्ति हुई। तदनन्तर सामवेद में पं० शंकर राम सामवेदी की नियुक्ति हुई। ये दोनों घराने (जड़े एवं सामवेदी) काशी में अति प्रसिद्ध थे।

इस प्रकार काशी के तीन योग्य वेदाध्यापकों को लेकर विद्यालय की पुनः स्थापना सन् १९२६ में भाद्रपद शुक्ल गणेश चतुर्थी (ढेला चौथ) के दिन हुई। भाद्रपद शुक्ल गणेश चतुर्थी का पर्व मिथिला में शुभ पर्व माना जाता है। इसका कारण, इसी दिन राज्य की प्राप्ति व स्थापना हुई थी। विद्यालय में कार्य प्रारम्भ होने के बाद अनेकानेक विद्यार्थी प्रविष्ट होकर वेदाध्ययन करने लगे। इस प्रकार विद्यालय तथा वेदों की उन्नति उत्तरोत्तर होने लगी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महाराज के यहाँ पुरानी परम्परा के अनुसार पूर्वजों के नाम से एक पोखरा बनवाने की प्रथा चली आ रही थी। इस प्रकार विद्यालय प्रारम्भ होने के बाद दरभङ्गा में ही दो पोखरे बनकर उनका तड़ागोत्सव हुआ। इसके लिए मिथिला में ही चतुरग्नि विधान के अनुसार एक जलाशयोत्सर्ग (जलोत्सव पद्धति) का निर्माण हुआ। इसके रचयिता मैथिल पण्डित म० म० हर्षनाथ झा थे। इसका सम्पादन इनके सुपुत्र पं० ऋधिनाथ झा ने तथा शुद्धीकरण म० म० पं० गंगानाथ झा ने किया। तड़ागोत्सव में काशी से दरभङ्गा विद्यालय के तीनों वेदों के अध्यापक जाया करते थे। इसमें अथर्ववेद की कुशकण्डिका व मधुपर्क अन्य वेदों की अपेक्षा बड़ा होने के कारण तथा लुप्त हो रहे अथर्ववेद के विषय में महाराजाधिराज रामेश्वर सिंह ने विद्यालय के अथर्ववेदाध्यापक श्री पं० रामचन्द्र शास्त्री रटाटे से कुशकण्डिका एवं मधुपर्क करवाया। प्रसन्न होते हुए महाराज ने कहा—आज मेरे यहाँ कुशकण्डिका तथा मधुपर्क सम्पन्न हुआ। ऐसा योग्यतापूर्वक काम मैंने नहीं देखा।

इस प्रकार विद्यालय दिन प्रतिदिन उन्नति की ओर अग्रसर होता गया। अकस्मात् ऋग्वेदाध्यापक जड़े जी का देहान्त हो गया। उनके स्थान की पूर्ति उन्हीं के भाई भाऊ दीक्षित जड़े ने की।

एक बार की बात है—श्री रामचन्द्र शास्त्री रटाटे चातुर्मास यागी थे। सोमयाग करने की इच्छा थी। परन्तु धनाभाव के कारण न कर सके। इसी बीच महाराज रामेश्वर सिंह से बात चीत हुई। महाराज ने ५० हजार रुपया खर्च बतलाया। महाराज के प्रश्न करने पर आपने बतलाया कि हमारे ऐसे गरीब ब्राह्मण के लिये ५०० रु० भी बहुत कठिन है। आप जैसे श्रीमान् ही इतनी राशि के लिये समर्थ हैं। मंजूरी हो गई। परन्तु "मनसा चिंतितं कार्यं दैवो अन्यत्र चिन्तयेत्।" दैवयोग से महाराज काल कवलित हो गये।

भारतवर्ष तथा विदेशों में भी इसकी उन्नति हुई। इसका श्रेय महाराजाधिराज रामेश्वर सिंह तथा अथर्ववेदाध्यापक पं० रामभट्ट जी रटाटे और निगमागम दरभङ्गा विद्यालय को ही है। अपने कार्य काल में ही, स्वाध्याय मंडल की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ओर से वेदों का प्रकाशन स्व० पं० श्रीपाद-दामोदर सातवलेकर कर रहे थे। उसमें अथर्वणेद का संशोधन कार्य रटाटे जी ने अपने शिष्यों समवेत किया। अध्यापन काल में सर्वाधिक विद्यार्थी पं० रामभट्ट जी रटाटे के ही तैयार हुये और हजारों की संख्या में शिष्य-प्रशिष्य शाखा के रूप में बढ़ी। इतनी ही अवधि में ऋग्वेदाध्यापक पं० भाऊदिक्षित जड़े का स्वर्गवास हुआ। तथा योग्य अध्यापक न मिलने से ऋग्वेद कक्षा खाली रही। परन्तु ऋग्वेद तथा ऋग्वेद कक्षा के संरक्षणार्थ पं० रामभट्ट जी रटाटे ने संचालन किया। कारण रटाटे जी स्वयं ऋग्वेद शाखा के होने के कारण इन्होंने ऋग्वेद के दशगंथ तथा क्रमांत अध्ययन किया था। वैसे तो इनको चारों वेदों का अधिकार तथा संस्कार था। अपने ऋग्वेद कक्षा के अध्यापन कार्य में रामघाट स्थिति साङ्गवेद विद्यालय में अपने विद्यालय के ऋग्वेद कक्षा के छात्र श्री सोमनाथ रामडोकर से परीक्षा दिलाकर उसको उतीर्ण कराया। पं रटाटे जी के स्वयं अपने विद्यार्थियों में अथर्ववेद के अन्य विद्यालयों में अध्यापक हुये। जिनमे सर्वप्रथम श्री पं० सखाराम भट्ट वैद्य गोयनका विद्यालय में अथर्ववेदाध्यापक हुये। उनके स्वर्गवास होने के पश्चात् उनके स्थान पर श्री पं० रटाटे जी के ही शिष्य श्री पं० नारायण भट्ट जी घुले अथर्ववेदाध्यापक नियुक्त हुये तथा धर्मसंघ महाविद्यालय में श्री पं० रामभट्ट रटाटे जी के ही शिष्य भूतपूर्व अथर्ववेदाध्यापक श्री रामचन्द्र शास्त्री आठवले नियुक्त हुये। रटाटे जी के प्रधान शिष्यों में स्व० श्री सखाराम भट्ट वैद्य, स्व० धुंडिराज शास्त्री रटाटे, स्व० नारायण भट्ट घुले, श्री रामचन्द्र भट्ट आठवले, श्री नारायण शास्त्री रटाटे, श्री मानेश्वर झा (मङ्गनू झा), स्व० शुकदेव झा०, श्री जगनाथ घुले, पं० सखाराम भट्ट वैद्य। ने अथर्ववेद के मंत्र शास्त्र का शोधन कर ख्याति प्राप्त की। इस प्रकार अथर्ववेद के विषय में लोगों का जो भ्रम था वह दूर होकर अथर्ववेद की एक परम्परा कायम हुयी। इतना होने पर भी यहाँ अध्यापकों का वेतन २५) ही था। जीवन यापन मे अत्यन्त अल्प होते हुवे भी अध्यापक बड़े ही संतोष से इसे स्वीकार कर विद्यादान तथा महाराज की ख्याति और विद्यालय की उन्नति के लिये कष्ट सहन कर कार्य करते थे। सबसे अधिक अध्यापन कार्य पं० रामभट्ट जी रटाटे ने ही किया। इनका कार्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काल ३५ वर्ष था। इस समय विद्यालय में अति प्राचीन सामवेदाध्यापक श्री पं० शंकरराम सामवेदी विद्यमान है। जो प्रधानाध्यापक पद पर कार्य कर रहे हैं। इनके भी अनेक शिष्य हुए जिनमें विद्यमान श्री पं० शिवराम त्रिपाठी हैं जो श्रौत स्मार्त विख्यात होते हुए इस समय सामवेद की सर्वोच्च परीक्षा दे रहे हैं। यह इनके ज्येष्ट पुत्र हैं। जड़े जी के देहान्त के ४ वर्ष बाद ऋग्वेदाध्यापक पद पर कर्मकाण्ड निष्णात वैदिक श्री पं० गणेश भट्ट जोशी की नियुक्ति हुयी। उनके पश्चात उनके अनुज श्री रंगनाथ भट्ट जोशी ऋग्वेदाध्यापक नियुक्त हुये। उनकी भी नियुक्ति साङ्गवेद विद्यालय में ऋग्वेदाध्यापक-पद पर होने से आज ऋग्वेद कक्षा समाप्त हो गई। इस प्रकार आज इस विद्यालय में दो तीन ही कक्षाएँ चल रही हैं। आज विद्यालय की अत्यन्त ही दयनीय तथा सोचनीयस्थिति उत्पन्न हो गई है।

पं० स्व० रामभट्ट जी रटाटे काशी त्याग के विरोधी थे। काशी त्याग तथा विद्यालय त्याग के भय से उन्होने सर्वस्व का त्याग किया। रटाटे जी ने नेपाल में पशुपतिनाथ के प्रधान पुजारी का पद पास होने का अवसर प्राप्त होते हुवे भी उसका त्याग कर दिया था तथा अयोध्यानरेश महाराज ददुवा जी के यहाँ उन्होंने राज्य में ४ वर्ष कार्य किया और काशी चले आये। इसी प्रकार बिकानेर नरेश महाराजाधिराज गंगासिंह जी ने उनको राज पंडित के पद पर नियुक्त करने के लिये अनेकानेक निमंत्रण पत्र भेजे। परन्तु उन्होंने उस पद को स्वीकार करने की इच्छा नहीं की। यद्यपि उनको वहाँ १५०) मासिक वेतन होने पर भी उनको विद्यालय के २५) मासिक वेतन में ही आनंद तथा प्रेम था। परन्तु जब बिकानेर नरेश के यहाँ से तार के द्वारा अत्याग्रह पूर्वक निमंत्रण आने लगा तब इन्होंने महाराज मिथिला नरेश से आज्ञा लेकर कुछ काल के लिये बिकानेर जाने का विचार किया। तदनुसार काशी से अपने साथ अपने पट्ट शिष्य श्री पं० काशीनाथ जी को लेकर बिकानेर गये और वहाँ ६ महिने कार्य कर उनके चित्त में शांती न रहने के कारण निमित्त बनाकर अपने शिष्य की स्थानापन्न नियुक्ति कर काशी चले आये और इसी विद्यालय में सहर्ष २५) मासिक वेतन पर कार्य करने लगे। अल्प वेतन उनके अग्नि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होत्र तथा गो-ब्राह्मण सेवा के लिये ही अल्प था। तथापि संतोष, शान्ति तथा धैर्य की अधिकता होने से निर्विघ्नता पूर्वक जीवन निर्वाह होता रहा और इसका परिणाम अन्त में यह हुवा कि उनको अंतिम समय में वाराणसेय संस्कृत विश्व-विद्यालय के सम्मानित प्राध्यापक होकर आठ वर्ष तक २००) मासिक मिलने लगा और अंतिम समय में उनको संतोष तथा शांतिपूर्वक काशी वास प्राप्त हुवा।

इस विद्यालय का कार्य तथा महाराज की सम्पत्ति की देखभाल एक बंग देशीय (बंगाली) करते थे। उसके बाद डा० आत्माराम रवगी ने इस कार्य को सम्हाला और योग्यतापूर्वक विद्यालय तथा उनकी सम्पत्ति का संरक्षण कार्य योग्यता पूर्वक किया। आज उनके स्थान पर उनके पुत्र यह कार्य योग्यता पूर्वक कर रहे हैं। परन्तु राज्य विलनीकरण के पश्चात राज्य से प्राप्त होने वाली सहायता बंद हो गई और विद्यालय बंद हो गया। परन्तु श्री पं० रटाटे जी तथा श्री पं० सामवेदीजी ने तत्कालीन उत्तर प्रदेश सरकार के शिक्षा मंत्री श्री पं० कमलापति त्रिपाठी जी से प्रार्थना कर विद्यालय को सहायता दिलाकर विद्यालय चालू रखा। कारण श्री पं० म० म० शिवकुमार जी इनके नाना थे जिन्होंने इस विद्यालय की बड़ी निष्ठा प्रेम, त्याग से सेवा की थी। तथा इस प्रकार काशी का अत्यन्त प्राचीन प्रसिद्ध विद्यालय बड़े ही जीर्ण-शीर्ण अवस्था को प्राप्त हो रहा है। बड़े खेद का विषय है कि इस तरफ किसी का भी ध्यान नहीं है। जिस निगमागम दरभङ्गा विद्यालय का एक उन्नति काल था, जिसके लिये धर्मप्राण महाराजाधिराज मिथिलाधिपति रामेश्वर सिंह ने आत्मवत् संरक्षण किया, जिस विद्यालय के अध्यापकों ने विद्या दान कर विद्यालय की सेवा की तथा चारों ओर यश फैलाया आज इसी विद्यालय की स्थिति प्रायः दयनीय हो गयी है। विद्यालय संरक्षण हेतु राज-परिवार और उदासीन सा हैं। यदि राज-परिवार इस तरफ थोड़ी भी दृष्टि कर दें। तो फिर से यह विद्यालय वेद विद्या का दान करने में समर्थ हो सकता है।

—:०:—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री सीतारामचन्द्र स्मृति लेखमालायाः प्रथमं पुष्पं

आथर्वणशान्तिः

यस्य निश्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत् ।
निर्ममेतमहंवन्दे विद्यातीर्थं महेश्वरम् ॥ १ ॥
"ऋग्वेदोथयजुर्वेदः सामवेदोह्यथर्वणः" ।
तमृचश्च सामानिच यजुंषिच ब्रम्हेचानुव्यऽचलन् ॥२॥

(अथर्ववेद कां १५, अ. १ सू० ६)

वेद विश्व की आधार शिला है । धर्मनीति, राजनीति, सामाजिक व्यवहार, हमारी शिक्षा दीक्षा सबका आधार मूल वेद ही है । वेद चार हैं—ऋग्, यजु, साम, अथर्व, इनकी शाखायें अनेक हैं । चारों वेदों के चार उपवेद हैं । जैसे क्रमशः आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद, स्थापत्यवेद । इस समय प्रचलित अथर्ववेद की शौनक शाखा का उपवेद कौन सा ? यह विचारणीय है।

अथर्ववेद शांति प्रधान वेद है । जितनी शांतियां तथा शांतिकर्म इस वेद में हैं उतनी अन्य वेदों में नहीं । इसका "शांतिकल्प" नामक सूत्र ही अलग है । इसका कारण यही है जैसे श्रीमद्भागवत में कर्दभ प्रजापति के नौ कन्याओं में "शांति" नामक कन्या का विवाह "अथर्वण" के साथ हुआ था ।

अथर्वणेऽददाच्छान्ति यथा यज्ञौ वितन्वते" । [श्रीमद्० भा०]

अथर्ववेद वेत्ताओं में तथा आथर्वणिकों के मूल पुरुष, अथर्वण तथा प्रजापति नाम से प्रसिद्ध हुए । इन्हीं के शिष्यों में दस दस के दो भागों में विंशति ऋचात्मक (अर्थात् विंशकाण्डों में) अथर्ववेद संहिता हुई । गो० ब्रा० । अ० सं० १९ कां० । अथर्ववेद संहिता विंशति कान्डात्मक अथवा एकोनविंशति काण्डा-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्मक है। इसमें मतभेद होकर यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। इसमें एकोनविंशति काण्डात्मक यह पक्ष अपुष्ट प्रमाणात्मक है, अथर्ववेद के ही प्रमाणों से विंशति काण्डात्मक ही है ऐसी पुष्टि होती है। इसके विषय में स्वतन्त्र रूप से विचार किया जायगा।

अथर्वण के ही पुत्र दधीचि हुए (दध्य आथर्वणः)। दधीचि के पुत्र पिप्पलाद हुए। इनकी माता का नाम बढ़वा प्रातिथेयी था। जिनसे प्रत्यङ्गिरा का प्रादुर्भाव हुआ। ब्रह्मरूप अथर्वण की शक्ति स्वरूपा शांति नामक पत्नी के ही कारण यह शांतिकर्म प्रधान वेद हुआ। आध्यात्मिक, आधिदैविक; आधिभौतिक तापत्रय अनुसार जैसे—मणिमन्त्र औषधि, यह इस वेद के प्रधान विषय हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अङ्ग भूत विषय हैं जैसे उच्चाटन, सम्मोहन, रक्षण, राजनीति, इत्यादि, जिनका आगे चल कर वर्णन किया जायगा।

इस वेद को ब्रह्मवेद भी कहते हैं। यज्ञ विध्वंस के समय भृगु ने (भृग्विङ्गिरोवेदः) रुद्र गणों का उच्चाटन किया, यथा—

कृताश्च तत्क्षणादेव भृगोर्मंत्र बलेनहि।
उच्चाटनं कृतं तेषां भृगुणा यज्विना तदा ॥ स्कं० पु०

इसके बाद शिव ने वीरभद्र नामक गण को भेजा तब इन्द्र ने भयभीत होकर बृहस्पति को आगे के कार्य में विचार करने के लिये प्रश्न किया। बृहस्पति सुराचार्य थे, देवताओं के पुरोहित थे, राजनीति विद् थे। आथर्वणियों में तथा अथर्ववेद वेत्ताओं में अग्रणी थे। अङ्गिरा के पुत्र होने से इनको अङ्गिरारस कहा जाता है। वृत्तासुर के वध के पश्चात् इन्द्र राजा की इन्द्रमेव प्रवृणुते यन्द्राजानमिति श्रुतिः (इन्द्रो राजा जगत....अथर्गवेद १९)। अङ्गिरा ने अथर्ववेद की ऋचाओं से स्तुति की इस पर इन्द्र ने प्रसन्न होकर इनको "अथर्वाऽङ्गिरारस" की उपाधि प्रदान की। (म० भा० द्रों० प०)। इसके लिये "अथर्वाङ्गिरसी श्रुतिः" यह इनका प्रमाण माना जाता है। इन्द्र के विचार मांगने पर देव गुरु बृहस्पति ने एक ही कहा—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न मंत्रौषधयः सर्वे नाभिचारा न लौकिकाः ।
न कर्माणि न वेदाश्च न मीमांसा द्वयं तथा ॥

मंत्र, औषधि, अभिचार, लौकिक, कर्म, वेद व धर्म, ब्रह्मलक्षणमीमांसाद्वय ईश्वर के ज्ञान में असमर्थ है। संतोष, शांति, अनन्यभक्ति इसी से सदाशिव को जानना चाहिये, यथा—

ज्ञातु मोशं संभवति भक्त्याज्ञेयस्त्वनन्यया ।
शांत्यात्र परया तुष्ट्या ज्ञातव्यो हि सदा शिवः ॥ (स्क० पु०)

मणिमंत्र, औषधि, महा शांति प्रधान इस वेद में गण होते हैं, जैसे शांतिगण, महाशांति, मणिवंध, सूक्तानि। गण अर्थात् समूह। अनेक मंत्रों का एक गण होता है। जैसे प्रधान रूप से दस गण हैं, अठारह शांतियां हैं तथा और तीन शांतियां है यथा अथर्व विधाने शान्तातीर्यत गण, भैषज्य गण, त्रीषस्तीय (त्रिसस्तय) गण, अभयगण, पराजय गण, आयुष्य गण, स्वस्त्ययन गण, शर्मवर्म गण, वास्तीष्पत्य गण, रौद्रगण, ।

इन गणों का क्रमशः फल इस प्रकार वर्णित है—शांति प्राप्ति, रोगनाश, पापनाश, भयनाश विजय की प्राप्ति, अपमृत्यु नाश, स्वस्तिप्राप्ति, श्रेय प्राप्ति, वास्तुदोष नाश, सर्वदोष नाश। अष्टादश शान्तियों का क्रम इस प्रकार है। १–वैष्णवी, २–ऐन्द्री, ३–ब्राम्ही, ४–रौद्री, ५–वायव्या, ६–वारुणी, ७–कौवेरी, ८–भार्गवी, ९–प्राजापत्या, १०–त्वाष्ट्री, ११–कौमारी, १२–वह्नि देवता, १३–मारुद् गणा, १४–गान्धारी, १५–नैर्ऋतकी, १६–आङ्गिरसी, १७–याम्या, १८–पार्थिवी। एतास्तु शान्तयः प्रोक्ताः सर्वकर्महिताः सदा ॥ अष्टादश्यः शान्तिभ्यः स्तिस्नोऽन्याः शान्तयोवराः ॥ वह तीन शान्तियां यह हैं— १–अमृता, २–अभया, ३–सौम्या, अमृता सर्व दैवत्या, अभयाब्रम्ह दैवत्या, सौम्या सर्व दैवत्या है। इन तीन शांतियों के तीन मणि बंधन बताये हैं, । यथा—अभया का मणिबंध सूक्त है, वाताज्जातो अन्तरिक्षात्.....अ० का० ४–१० शङ्खजमणिः। अयंमे वरणोमणिः.....अ० का० १०–३। शतकांड

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मणिः। अमृता का मणिबंध सूक्त है, शतकांडोदुश्चवनः"""""अ० कां० १९–३२। सोम्या का मणिबंध सूक्त है, । उपरोक्त शांतियों के देवता मंत्र सिद्धि से मणिबंधन सिद्ध हो जाता है। यह शांतियां दिव्यान्तरीक्षभौमादि समुत्पातों का अर्दन करनेवाली कही गई है। (वि० ध० पु०)। आथर्वणानां-शान्तिनाँ एषशान्ति विधिः प्रोक्तः समासात्सर्व शान्तिषु॥ विस्तरे विस्तरः प्रोक्तः शान्तिकर्मह्यथर्वणः॥ इस प्रकार यहाँ संक्षेप में शान्ति प्रकारण का उल्लेख किया गया है। अब अथर्वणशान्ति का कितना महत्व तथा श्रेष्ठत्व है, इसके लिये एक उदाहरण रूप में दृष्टांत दिया जाता है, यथा—

अश्वशमन शान्ति प्रकरणेमोंपथब्राह्मणं· "प्रजापतिर्वेदानुवाच""""""" वागभ्युवाचाश्वः शम्यतेति, तथेति तमृग्वेद एत्योवाचाह मश्वंशमेयमिति तस्माद् महद्भ्रयं समृजे,"""""स सोवाचा शान्तोन्वयमश्व इति। तं यजुर्वेद एत्यावाचाह मश्वेशमेयमिति, अस्मादपि महद्भ्रयं ससृजे, केननुत्वां शमयिष्यसीति, रथन्तरं-नाम मे साम अधीरञ्चाक्तूञ्ज तेनाश्व मभिष्ट्रयते, तस्मादपि तदेव महद्भ्रयं ससृजे,"""""स सोवाचा शान्तोन्वयमश्व इति। तान्वागभ्युवाच शंयुमाथर्णणं गच्छथेति, ते शंयुमाथर्णणंमासीनं प्राथोचुश्शंयुं बृहस्पति पुत्रं यथा चोक्तं— (शंयुः पप्रच्छ यत्पूर्वं पितरं वै बृहस्पतिम्॥ बृहस्पति मुपासीनं सर्वज्ञानार्थ को विदम्॥ पुत्रः शंयुरिमंप्रश्न पप्रच्छा विवयान्वितः॥ वा० पु०॥) नमस्ते अस्तु भगान्वस्वंशम्येतेति। तथेति सखलु कबन्धस्याथर्वणस्य पुत्रमामन्त्रयामास विचारिन्निति, विचारीहवै कावन्धिः कबन्धस्या थर्वणस्य पुत्रो मेधारी मीमांसक्रोऽनूचान आस, भगो इति हास्मै प्रति श्रुत प्रति शुश्रावाश्नं शम्येतेति, तथेति सखलु "शात्युदकं" चकारा-थर्वणी भिश्चाङ्गिरसो भिश्चातनै मातृ नाम भिवीस्तोष्पत्यै परिति शमयति। तस्यह स्नातस्या श्वस्याभ्युक्षितस्य सर्वेभ्यो रोमशमरेभ्यऽङ्गारा आशीर्यन्तसोऽश्वस्तुष्टो नमस्कारं चकार नमः शंयुमाथवर्णाय योमा यज्ञमचीकृपदिति॥

राजनीति में भी "अथर्ववेद" का कितना महत्व है, भारतवर्ष में राज-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शासन (राजतंत्र) पद्धति से ही नीतियों का निर्माण हुआ है जिनका आधार वेद ही है जैसे भारतीय वैदिक शासन पद्धति, भारतीय वैदिक धर्म नीति आदि।

भारतीय वैदिक राजनीति जो अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है, जिसका देशकाल परिस्थिति के अनुसार कालान्तरों में परिवर्त्तन होता गया है, उसी भारतीय वैदिक राजनीति के रचयिता, प्रवर्त्तक, राजनितिज्ञ कौन थे ?

एतत्ते राजधर्माणां नवनीतं युधिष्ठिर ॥
बृहस्पतिर्हि भगवान्नान्यं धर्मं प्रशंसति ॥
बिशालाक्षश्च भगवान् काव्यश्चैव महातपाः ॥
सहस्त्राक्षो महेन्द्रश्च तथा प्राचेतसो मनुः ॥
भरद्वाजश्च भगवान् तथा गौर शिरा मुनिः ॥
राजशास्त्र प्रणेतारो ब्रह्मणा ब्रह्मवादिनः ॥
रक्षामेव प्रशंसंति धर्मं धर्म भृतांवरः ॥ [म० भा०]

इसके अतिरिक्त और भी पूर्वकाल से लेकर आजतक अनेक नीतिज्ञों ने अपनी-अपनी नीतियों का निर्माण किया है।

राज्य शासन व्यवस्था में दण्डनीति का बहुत महत्व है। उसके शास्त्रों में क्रमशः ग्रंथों के नाम इस प्रकार हैं—

"वैशालाक्ष" "बाहुदन्तक" "बार्हस्पत्य" ॥

यह नीति शास्त्र कहाँ से आया ? ब्रह्मदेव ने अपनी बुद्धि से एक लाख अध्यायों का एक "नीतिशास्त्र" रचा। उसमें धर्म अर्थ काम का वर्णन था। वह ग्रन्थ "त्रिवर्ग" नाम से विख्यात हुआ। चौथा वर्ग मोक्ष है उसके फल और गुण इनसे पृथक हैं। इस शास्त्र में साम, दाम, दण्ड, भेद और उपेक्षा इन पांचों उपायों का पूरा-पूरा वर्णन है। इस नीतिशास्त्र की रचना हो जाने पर यही दण्डनीति नाम से विख्यात विद्या तीनों लोकों में विद्यमान है। वास्तव में दण्ड से ही राज्यव्यवस्था चलती है। यह दण्डनीति छः गुणों से युक्त है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस शास्त्र में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, सभी का विचार है। सबसे पहले भगवान् शंकर ने उस नीति शास्त्र को ग्रहण किया। उन्होंने जीवों की आयु क्षीण होते देख उस शास्त्र को संक्षिप्त किया। यह ग्रंथ "वैशालाक्ष" कहलाया। इसे इन्द्र ने ग्रहण किया। इसमें कुल दस हजार अध्याय थे। फिर इन्द्र ने भी इसे संक्षिप्त किया और इसमें केवल पाँच हजार अध्याय रह गये। यह ग्रन्थ "बाहुदन्तक" कहलाया। इसके बाद वृहस्पति जी ने इसे तीन हजार अध्यायों में संक्षिप्त कर दिया। यह ग्रन्थ बाहर्स्पत्य" नाम से प्रसिद्ध हुआ। फिर योगाचार्य शुक्रजी ने इसे संक्षिप्त करके एक हजार अध्यायों में रचा। इस प्रकार महर्षियों ने मनुष्यों की आयु का ह्रास होते देखकर लोकहित की दृष्टि से इस शास्त्र को बहुत संक्षिप्त कर दिया। [म० भा०]

आचार्य वृहस्पति नीतिज्ञों में श्रेष्ठ थे, कारण वे अथर्ववेद् थे, और इसीलिये राजा इन्द्र के यहाँ आचार्य वृहस्पति पौरोहित्य पद पर नियुक्त थे। उनके बिना इन्द्र भी राज्य शासन कार्य में विचार करने में असमर्थ रहते, शासन में विषम स्थिति उत्पन्न होने पर उनसे विचार कर कार्य करना पड़ता था। वृहस्पति को रक्षा विभाग, अर्थविभाग, दण्ड विधान, सभा नियम, शांति कर्म, स्तंभन, उच्चाटन, संमोहन, यज्ञीय ब्रह्म कर्म आदि का अच्छा ज्ञान था। इसलिये वे राज-पुरोहित थे। राजपुरोहित के जो लक्षण होने चाहिये वे सब उनमें विद्यमान थे। जैसे कहा है—"राज्ञा पुरोहितः कीदृशः कार्यः...। अमंगलक्षणोपेत अनुकूल प्रियं वदम्! अथर्ववेद विद्वांस...पुरोहितमथर्वणम्...पंचकंल्पविधा-नज्ञं...! नक्षत्रकल्पो वैतान कल्प स्मृती यः संहिताविधिः॥ चतुर्थोङ्गिरसां कल्पः शांतिकल्पस्तू पंचमः॥ १॥ पंचकल्प विधानज्ञं आचार्यं प्राप्यभूपतिः॥ सर्वोत्तात प्रशान्तात्मा भुनक्ति वसुधां चिरम्॥ २॥ (वि० ध० पु०) पुरोहित किंवा एक याज्ञिक ही नहीं थे, एक श्रेष्ठ कुशल राजनीतिज्ञों के गुरु थे। वैसे उक्त प्रमाणों से प्रमाणित होता है—"बृहस्पतेः प्राप्तनयं प्रतीतम्।" वृष्णीनां प्रवरो मंत्री कृष्णस्य दयितः सखा। शिष्यो वृहस्पतेः साक्षादुद्धवो बुद्धि सत्तमः॥ (श्री० भा०) "बार्हस्पत्य प्रणीतं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

च शास्त्रं गृह्णंति मानवाः।" (दे० भा०) अध्यायानां सहस्त्रैस्तुत्रिभिरेव बृहस्पतिः॥ संचिक्षेपेश्वरो बुद्धया बार्हस्पत्यं यदुच्यते॥ "विशालाक्षं बाहुदंतकं बार्हस्पत्य मित्युत्तरोत्तर संक्षिप्त दंडनीति ग्रन्थनामानि।

(म० भा०)

अथर्ववेद शब्द ब्रह्मात्मक है। इस वेद को ब्रह्मवेद भी कहते हैं। ब्रह्म शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है, एक कर्म में तथा दूसरा परब्रह्म में। जैसे कहा भी है—"कर्म ब्रह्म स्वरूपिणे, अथातो धर्म जिज्ञासा।" "अथातो ब्रह्म जिज्ञासा" "शब्द ब्रह्म परब्रह्म चोभेमेशाश्वती तनू" "शब्द एव ब्रह्म।" पूर्वकाल में चातुर्होत्र कर्म में ब्रह्मत्व का अधिकार अथर्ववेद को ही था। इसके अधिकारी आचार्य बृहस्पति थे, यद्यपि ये आचार्य थे कारण आचार्य के लक्षण इनमें थे, जैसे आचार्य के लक्षण कहे हैं यथा—'उपनीयं च वैशिष्यं वेदमध्यापयेत् द्विजः॥ संकल्पं स रहस्यं च तमाचार्यं विदुर्बुधाः॥ अन्य अनेक दृष्टांतों से अथर्व वेद का ब्रह्मत्व सिद्ध होता है।....अथर्वाङ्गिरोभिर्ब्रह्मत्वम्: अथर्वविज एव ब्रह्मत्वम् आम्नातम्। अथर्वंगिरोविदं ब्रह्माणम्। अथर्वाख्येन ब्रह्मणा दृष्टत्वात् तन्नाम्ना अयं वेदो मपदिश्यते। ब्रह्मवेदः। अतएव सर्वं सात्वाद् अयंवेदः श्रेष्ठ। श्रूयतेहि—"श्रष्ठोहि वेदस्तपसोऽधिजातो ब्रह्मज्ञाना हृदये संवभू।" एतद् वैभूथिष्ठं ब्रह्म यह भृग्वंगिरसः। एवं सारभूत ब्रह्मात्मकत्वाद् ब्रह्मकर्तव्य प्रतिपादनाच्च अयं ब्रह्मवेद इत्यव्याख्यायते। तथा च श्रुतिः। चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदा यजुर्वेदः सामवेदो ब्रह्मवेदः इति। अतएव सारवत्त्वात् सिद्धमन्नता समाम्नायतेन तिथिर्वचन नक्षत्रं न ग्रहो न च चन्द्रमाः॥ अथर्वमन्त्र संप्राप्ता कर्वांरीद्धिर्भविष्यति॥ तथा स्कांदेकमलालय खण्डे आथर्वण मन्त्राणां जपमात्रेणाभिमत फल साधनत्व मुक्तम् (प० २।५)—यस्तत्राथर्वणान् मन्त्रान् जपेश्रद्धा समन्वितः। तेषाम् अर्थोद्भवं कृत्स्नं फलं प्राप्नोति सध्रुवम्॥ "अथर्वांगिरोविदमेव ब्रह्माणं वृणाष्व सहिब्रह्मत्वं वेद।" (गो० ब्रा०) तदेवम् अनन्यलभ्यत्वाद् अथर्ववदैक समधिगम्यम्,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इति स्थितम् । (अ० भा० भू०) कालान्तर में इसके आभिचारिक प्रयोगों के आधिक्य के कारण इसका ब्रह्मत्व पद का यज्ञिमाधिकार क्षीण हो गया। उदाहरणार्थ—दक्ष के यज्ञ में शिवनिन्दा होती देख दधीचि ऋषि कान बन्दकर दक्ष यज्ञ को त्यागकर चल दिये। उस समय दक्ष ने कहा हैं—गतः शिवप्रियोविप्रो दधीचिर्नाम नामत । आविष्ट चित्ता मंदाश्च मिथ्यावाद रताः खलाः । वेद वाह्यादुराचारा स्ताज्या स्तेह्यज्ञ कर्मणि ॥ (स्कं० पु०)

अथर्ववेद के तीन प्रधान उपनिषद् कहे हैं—मुंडकः, मांडुक्य, प्रश्न। पर ब्रह्म विषयक इसकी सिद्धता कैसी होती है—"ॐ कार प्रभवावेदा" प्रश्नोपनिनेद् में ओंकार की इन मात्राओं के ज्ञान तथा इनकी उपासना के विशेष फल बताये गये हैं यथा—एतद् वै सत्यकामपरं चापरं च ब्रह्म यदोकारः। तस्माद् विद्वाने ते नैवारतने नैकतरमन्वेति ॥ ओंकार परब्रह्म तथा अपरब्रह्म उभय स्थानीय है। इसी कारण ओंकार के ही अवलम्बन से परब्रह्म या अपरब्रह्म की उपासना होती है। ओंकारात्मक वेद में "ह्रस्वोदात्त एकाक्षर ओङ्कारथर्व-वेद" (गो० ब्रा०) कहा है। मात्रा विभाग में स्तर्द्ध चतुर्थी मात्रात्मक अथर्व वेद है यथा—या सार्द्धचतुर्थी मात्रा सर्वदेवत्या व्यक्तीभूता खं विचरति शुद्ध स्फटिक सन्निभावर्णेन यस्तांध्यायते नित्यं स ग्रच्छोद् पदमनामकम्। (गो० ब्रा०) इसी प्रकार शिवाथर्वशीर्षोपिनिषद् में भी ओंकार की प्रत्येक मात्रा का फल, देवता, वर्ण, स्थान, वेद, इनका अलग वर्णन किया है। यथा—ब्रह्मदैवत्या, विष्णुदैवत्या, ईशान दैवत्या, ब्रह्म का संबंध एक एक मात्रा से पास होता जाता है। इस क्रम के अनुसार अथववेद का सीधा ब्रह्म संबंध है। कहा भी है—"अर्द्धमात्रा स्थितानित्या याऽनुच्चार्या विशेषतः।" (मा० पु० दे० भा०) अर्धश्लोकात्मकं यत्तु...वेदसिद्धान्त बोधकम्। "सर्वं खल्विदमेवाहं नान्यदस्तिसनातनमिति।" वेद सिद्धांतबोधकं "सर्वं खल्विदं ब्रह्मेति" वेदसिद्धांतकस्यः बोधकमित्यर्थः।

इस प्रकार से उपनिषद् इत्यादि अथर्णवेद के ब्रह्मत्व के एकी भाव का प्रतिपादन करते हैं। यथा जिस प्रकार प्रलय तथा उत्पत्ति द्वारा प्राज्ञ में विश्वते-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जस की मिति अर्थात् मान होता है उसी प्रकार प्रणेश निर्गम द्वारा मकार में अकार उकार का समझना चाहिये। इसके सिवाय अपीति, अव्यय अर्थात् एकी भाव का सम्बन्ध है। अर्थात् जिस प्रकार ओंकार के उच्चारण में अन्तिम अक्षर मकार में अकार उकार का एकी भाव होता है, उसी प्रकार सुषुप्ति दशा में प्राज्ञ में विश्व और तैजस का एकीभाव है। जो इस एकता के रहस्य को जानता है उसको जगत् के सकल पदार्थों का याथात्म्यभाव परिज्ञात हो जाता है। चतुर्थ भाव में ओंकार मात्रा हीन है उसके साथ अभिधान अभिधेय सम्बन्ध विहीन तुरीयपद स्थित प्रपंच पर पारस्थित शिवरूप अद्वैतरूप आत्मा की एकता है। जो इस एकता के तत्त्व को समझता है, वह पुनरावृत्ति हीन ब्रह्मपद को प्राप्त हो जाता है। यही ब्रह्म के चार पद के साथ मिला विशिष्ट तथा मात्रा हीन ओंकार का अभिन्न भाव सम्बन्ध है। गीता में भी वर्णित है—ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म...। "येऽथर्वाणो येऽथर्वांग स्तद्भेषजं यद्भेषजं तदमृतं यदमृतं तद् ब्रह्म।" (गो० ब्रा०) अथर्वारियेन ब्रह्मणा...यहाँ अभ्यास वैदिक परम्परा के पठन पाठनानुसार पात्र इस प्रकार का कहा है यथा—श्रुत्यभ्यासः पंच धास्यात् स्वीकारोर्थं विचारणम्। अभ्यास श्चजप श्चापि शिष्येभ्यः प्रतिपादनम्। लब्धस्य प्रतिपादार्थमलब्धस्य च लब्धये॥ वेदों का ज्ञान वेदों के मूल अध्ययन के बाद ही होता है। एक तो भगवान् वेद व्यास की महती कृपा से आज हजारों मन्त्रों की संख्या में वे संहितायें उपलब्ध हो रही हैं यद्यपि—"अनन्ता वै वेदाः" यह श्रुति है परन्तु आगे चलकर लोग अल्प मति होंगे इसलिये उन्होंने पहिले ही वेदों के विभाग कर दिये, जैसे कहा है—क्षीणायूषः क्षीण सत्वान्दु मेधात्वी य कालतः। वेदा ब्रह्मर्ष योव्यस्यत .....। पराशरात्सत्यवत्यां .....वेद चक्रे चतुर्विधम्। ऋगथर्व यजुः साम्नां राशोनुद्धत्यवर्गशः॥ चतस्रः संहिताश्चक्रे.....। (श्रीं भा०)

इसी ह्रास क्रम के अनुसार कुछ काल के पश्चात् हो सकता है कि यही आज उपलब्ध वेद, संहितायें हजारों मन्त्रों की संख्या से कम होकर कुछ सूक्तों मन्त्रों में हो सकती हैं। इस अल्पत्व को देखते हुये भी जातीयवाद, परम्परावाद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के द्वारा वेद की उपेक्षा की जा रही है। बड़े ही खेद का विषय है आज अथर्ववेद के ग्रन्थ व अथर्ववेद ज्ञाताओं की कमी क्यों? पूर्वकाल में राजतंत्र में राष्ट्र के संरक्षणार्थ, राष्ट्र में शांति के लिये, रक्षाविद्, शांति विधानज्ञ, अथर्ववेद विज्ञोंको राजाओं के यहाँ राज्याश्रय प्राप्त होता था जिनके विषय में अनेक दृष्टान्त प्राप्त होते हैं विस्तार भय से थोड़े ही में उद्धरण दिये जाते हैं; यथा— पुरोहितोऽथर्वविद् वै जुहावग्रह शान्तये। (श्री० भा०) याज्ञवल्क्य, विष्णु पुराण, ब्रह्म पुराण, मत्स्य पुराण, पैठीनसिः, कांमदकि; चाणक्य, रघुकाव्य, मनु, गौतम, मार्कण्डे पुराण, परिशिष्ट, गोपथ, ब्रह्मपुराण, भागवत, इत्यादि वचनों में से सर्वविदित है। आज राजतन्त्र समाप्त हो गया, प्रजातन्त्र आया, वैदिकों का आश्रय समाप्त हो गया अवैदिकों का साम्राज्य छा गया, वेद वैदिकों की दुर्दशा होने लगी, वेद वैदिकों के संरक्षण से ही भारतीय-संस्कृति का रक्षण हो सकता है। कहा भी है—षडेतान्पुरुषो जहयाद्भिन्नांनावमिवर्णिवे। अप्रवक्तारमाचार्यं मनधीमान मृत्विजम्॥ अरक्षितारं राजानं भार्यां च प्रिय वादिनीं। ग्राम काम च गोपालं वन कामं च नापितं॥ (प्रा० म०)

आज भारत वर्ष में अथर्व वेद के समुचित परंपरा गत पठन पाठन की कहीं भी विद्या पीठ नहीं, हमारी प्रजातन्त्रीय सरकार ने इधर ध्यान देना चाहिये और विशिष्ट आर्थिक सहायता देकर अथर्ववेद के परंपरा गत पठनपाठन की व्यवस्था करनी चाहिये। अथर्ववेद की शांति के महत्व में कहा भी है, यथा—

तद्वदेव ऐहिक फलानि शान्तिक पौष्टिक नि कर्माणि राजकर्माणि अपरिमित फलानि तुला पुरुषादि महादानानि च अथर्ववेद एव प्रतिपादितानि। पौरोहित्यं च अथर्वविदेव कार्यम्। तत्कर्तृणां कर्मणां राज्याभिषेकादीना तत्रैव विस्तरेण प्रतिपादितत्वात्। तथा च विष्णु पुराणे "पौरोहित्यं शान्तिक पौष्टिकादि राज्ञाम अथर्ववेदेन कारणद ब्रह्मत्वं च" भट्टाचार्यैरपिउक्तम्—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शान्तिपुष्ट्यभिचारार्थां एक ब्रह्मर्त्विगाश्रयाः । क्रियन्तेऽथर्ववेदेन तय्येवात्मीय गोचराः ॥

नीति शास्त्रोऽपि—

त्रयां च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात पुरोहितः । अथर्व नवहितं कर्म-कुर्याच्छान्तिक पौष्टिकम् ।

मत्स्यपुराणे—पुरोहितं तथाथर्वमन्त्र ब्राह्मण पारगम् ।

मार्कण्डेय पु राणे—

अभिषिक्तऽथर्व मंत्रैर्महीं भुक्तेक्ष सागरम् ।

अथर्व परिशिष्टे—

यस्य राज्ञो जनपदे अथर्वा शान्ति पारगः । निवसत्यपितद् राष्ट्रं वर्धते निरुपद्रवम् । तस्माद्राजा विशेषेण अथर्वाणं जितेन्द्रियम् । दान सम्मान सत्कारैर्नित्यं समभिपूजयेत ।

॥ इति ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उपसंहारः

"वेदप्राणिहितोधर्मः अधर्मस्तद्विपर्यय"

वेद में वर्णित आचरणीय धर्म ही धर्म कहलाता है। उसके विपरीत आचरण, अधर्म कहलाता है, वेद निर्दिष्ट, वेद प्रणीत धर्म को "वैदिक धर्म" कहा जाता हैं। वेदेन प्रणिहितो विहितो धर्मः। वेदप्रमाणइत्यर्थः। अनेन यो वेद प्रमाण कः सः धर्मो यो धर्मः स वेद प्रमाणक इति। तद्विपर्थयो यो वेदनिषिद्धः सोऽधर्मः। आदेश का पालन करना ही अर्ह्य है, आदेश का अवमान करना दण्ड्य है। परन्तु आज वेदों के ह्वास के साथ वैदिक धर्म का भी ह्वास होता जा रहा है। वेदों के संरक्षण से भारतीय वैदिक धर्म का संरक्षण संभव है अन्यथा नहीं। ऋगादि वेदों की तो तत् शाखोय होने से कुछ परंपरा बनी हुई है, परन्तु अथर्ववेद की वैसी वस्तु स्थिति नहीं। कारण, अथर्ववेद के शाखा सूत्रों का ही लोप हो रहा है। "अथर्ववेदी" अन्य शाखा सूत्र का परिग्रह कर रहे हैं, जबकि सूत्र त्याग का महान् दोष बतलाया है। यथा—शाखां प्रति तथा तत्र तत्प्रमाणमिति स्थितिः। यः स्वसूत्रमतिक्रम्य परसूत्रेण वर्तते। अप्रमाणमृषि कृत्वा सोच्य धर्मेण पूज्यते। तस्मात् सर्वं प्रयत्नेन स्वसूत्रं न विलंघयेत्॥

(वि० ध० उ०)

इस स्थिति का कारण है, अथर्ववेद के ग्रंथों का अभाव, उनका अप्राप्त होना और "परपरा का" लोप होना है। ऐसी परिस्थिति में लुप्त होते वेद का संरक्षण होने का प्रयत्न होना चाहिये। परन्तु कोई कोई सज्जन ऐसे भी हैं जो अथर्ववेद की उन्नति या पुष्टि हो रही हो इस एक (शौनकीय) शाखा का संरक्षण भी नहीं कर सकते, प्रत्युत अथर्ववेद विषय में वह जन्म, जाति शिखा, सूत्र देखने का स्वप्न देख रहे हैं, जबकी शिखा सूत्र ही नहीं प्राप्त हो रहा है, तत्त्व

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहाँ से प्राप्त हो सकता है, जातिवाद का युग समाप्त हो गया, यह गणतन्त्र युग चल रहा है। समाजवाद का युग है, देश समाजवाद की तरफ बढ़ रहा है, देश को समाजशास्त्र एवं समाजवाद की आवश्यकता है। इसी में देश का कल्याण है। एक तो अथर्वणवेद का संरक्षण अन्य शाखा के लोग करते चले आ रहे हैं, जिसके लिये काशी प्रधान केन्द्र रहा है। वैसे तो सारे भारतवर्ष में विदित है, विशेषकर पूर्वोत्तर भारत में अथर्वणवेद का प्रचार प्रसार, मिथिलाधिपति श्रीमान् महाराज दरभंगा नरेश के पुण्यप्रताप तथा गौरव से उनके काशी स्थित दरभंगा विद्यालय के अथर्वणवेदाध्यापक स्व० श्री प० पू० पं० रामचन्द्र शास्त्री रटाटे (राम भट्टजी) अग्निहोत्री के चालीस वर्ष के अध्यापन का फल है।

आज यह विद्यालय दरभंगा राज्य तथा राजपरिवार की आर्थिक सहायता से वंचित हो गया है। एक समय जिस दरभंगा विद्यालय के माध्यम से वेदों का संरक्षण होता रहा आज वही विद्यालय दयनीय व शोचनीय अवस्था को प्राप्त हो गया है। इसमे अथर्वणवेद के अध्ययन-अध्यापन की समुचित व्यवस्था न होने से शीघ्र ही इसके लुप्त प्राय होने की संभावना है। तथापि इस वेदह्रास-काल में आज काशी में श्री काशी विश्वनाथ की कृपा से इस विद्या क्षेत्र में जो कोई थोड़े इने गिने अथर्वणवेद शौनक शाखाध्यायी हैं उनके लिये यह कहावत चरितार्थ होती है—"अंधों में काना राजा।" कुछ भी हो कुछ लोग आज इस महान् महर्घता के समय में भी, अपने जीवन निर्वाह की चिन्ता न करते हुए महान् कष्ट से समय व्यतीत करते हुए वेद का संरक्षण कर रहे हैं—यह कोई सामान्य बात नहीं है।

इस दिशा में अथर्ववेद विद्या के संरक्षण अध्ययन-अध्यापन हेतु, धार्मिक आस्तिक, विद्या प्रेमियों एवं शिक्षा संस्थाएँ तथा प्रान्तीय सरकार, केन्द्र सरकार ने विशेष सहायता अनुदान के द्वारा अविलम्ब इस वेद का संरक्षण करना परमावश्यक है नहीं तो इस महान् शान्ति पौष्टिक, प्रधान शौनकीय शाखा की पठन पाठन परिपाठी आज रसातल को जा रही है और एक वेद विद्या का ज्ञान समाप्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो रहा है। कुछ धर्म के ठेकेदार, धर्मध्वजी, सम्मेलनों, धार्मिक आयोजनों में वेद का माहात्म्य बतलायेंगे, वेद संरक्षण की योजना बनायेंगे, गो ब्राह्मण वेद की प्रशंसा करेंगे, जैसे—"जेकर बीहा ओकर गीत"। मंच पर आवाज बुलंद करेंगे, आयोजन समाप्त होते ही योजनायें भी समाप्त हो जाती हैं ठीक उसी प्रकार जैसे—"उर्ध्वं बाहुर्विरौम्येष नच कश्चित् शृणोति मे"—इसको अपसरवादी कहा जाय तो आपत्ति नहीं।

वेदों का संरक्षण इस प्रकार नहीं हो सकता, वेदों का संरक्षण वेद में उपाख्या (डाक्टरेट) करने से नहीं हो सकता, जिस वेद का संस्कार नहीं, उस वेद में उपाधियाँ प्राप्त करना अर्थ का अनर्थ है। वेद में उपाख्या करने की अनुमति उसी को प्रदान की जानी चाहिये जो जिस वेद की उपाख्या करने वाला हो उसको उस वेद में वैदिक धर्म, वैदिक परम्परा के अनुसार अध्ययन ध्यापन का अनुभव हो इसी से अर्थ का अनर्थ होने के बच सकता है और वेद विद्या का सत्यज्ञान प्राप्त होकर वेद का संरक्षण हो सकता है।

★

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्टम्

'शान्ति एवं गण'

नक्षत्र कल्प में तीस महाशान्तियों का क्रमफल इस प्रकार वर्णित है। दिव्यान्तरिक्ष भौमेषु उत्पातेषु अमृताख्यामहाशांतिः गतायुषां पुनर्जीवनाय वैश्वदेवी। अग्निभयनिवृत्तये सर्वकामावाप्तये चाग्नेयी। नक्षत्र ग्रहोपसृष्ट भयार्तरोग गृहीतानां तच्छान्तये भार्गवी। ब्रह्मवर्चस कामस्य वस्त्रा शयनाग्नि ज्वलने च ब्राह्मी। राज्य श्री ब्रह्म वर्चस कामस्य बार्हस्पत्या। प्रजापश्वन्न लाभाय प्रजाक्षय निवृत्तये च प्राजापत्या। शुद्धि कामस्य सावित्री। छन्दो ब्रह्मवर्चस कामस्य गायत्री। संपत्कामस्य अभिरतोऽभिचर्यमाणस्य च आङ्गिरसी। विजयबल पुष्टि कामस्य परचक्रोद्वेजन कामस्य च ऐन्द्री। अद्भुत विकार निवृत्ति कामस्य राज्यकामस्य च माहेन्द्री। धनकामस्य धनक्षय निवृत्ति कामस्य च कौवेरी। विद्यातेजो धनायुष्कामस्य आदित्या। अन्नकामस्य वैष्णवी। भूतिकाम वास्तु संस्कार कर्मणोर्वास्तोष्पत्या। रोगार्तस्य आपद् ग्रस्तस्य च रौद्री। विजयकामस्य अपराजिता। यमभये याम्या। जल भये वारुणी। वात्याभये वायव्यी। कुलक्षय निवृत्तिये संतत्याख्या। वस्त्रक्षय निवृत्तयेत्वाष्ट्री। बालस्य व्याधिनिवृत्तये कौमारी। निर्ऋति गृहीतस्यनैर्ऋती। बलकामस्य मारुद्गणी। अश्वक्षय निवृत्तये गान्धर्वी। गजक्षय शान्तये पारावती। भूमिकामस्य पार्थिवी। भयार्तस्य अभयाख्या महाशान्तिः। नक्षत्र कल्पोक्तानि कर्माणि अथर्ववेद भाष्य भूमिका। भृगूंगिरोक्त बृहत्सवीनुक्रमणिकामे प्रथम पटल के प्रारंभ में आथर्वण गण मंत्रों का इस प्रकार उल्लेख किया है।

छांतातीयगण, भैषज्यगण, रुद्रगण। अथ दसगणाः। शांतिगण, कृत्याप्रतिहरणगण, चातनगण, मातृनाभागण, वास्तोष्पतिगण, पाष्महागण, पक्ष्मनाशनगण, दुःस्वप्न नाशन गण, आयुष्यगण, सर्वगण, अथगणाः। स्वस्त्यनाभयोपराजित शर्मवम्मी देवपुरीय चित्रागण। आदित्यगण, पांचपत्यगण, सालिलगण, विश्वकर्मागण, अर्थमुत्छापन गण, राज्याभिषेकगण, अहोलिंग गण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रुद्रेश्वर शिव की स्थापना

श्रीमान् महाराजाधिराज लक्ष्मीश्वर सिंह ने रुद्रेश्वर मन्दिर का पुनर्निर्माण कराकर, "रुद्रेश्वर" शिव की स्थापना कराकर अपने पितामह के कार्य को पूर्ण किया। इसके पीछे एक आश्चर्यकारिणी अद्भुत घटना है, जिसका प्रसंग-वस यह वर्णन किया जाता है। महाराज रुद्रबहादुर सिंह प्राचीन आचार विचार के अपने वचन तथा परिवार और प्रजा का यथावत् पालन करनेवाले थे। इनके पास सहायता के लिये आये हुए, निराश खाली हाथ नहीं लौटते थे। कुछ न कुछ अवश्य प्राप्त हो ही जाता, ये बड़े ही उदार हृदय थे, इनके पिता। (महाराज छत्र सिंह) का काशी में एक शिव मंदिर बनवाने का संकल्प था, परन्तु वह पूर्ण न हों सका। अपने पिता के मनः संकल्पित कार्य को पूर्ण करने के लिए, महाराज रुद्रेश्वर सिंह बहादुर ने काशी में नीलकंठ महाल में प्रारंभ किया। उसी समय काशी में कन्हाई झा और मोहनलाल झा रहते थे। मोहनलाल झा तो कुछ दिनों के बाद काशी से दरभंगा जाकर श्रीमान् के दरबार में मोसाहिब पदपर नियुक्त हुए। कन्हाई झा काशी में ही रहने लगे, कुछ समय बाद इनके द्वारा सोने के आभूषण इत्यादि राजसी ठाठबाट की वस्तुएँ दरभंगा भेजी गयीं, जिसमें दलालों की दलाली नहीं गली, यथावत् मूल्य की थीं। इस कारण कन्हाई झा महाराज के विश्वासभाजन हुए। बाद में मंदिर के निर्माण का भार भी इन्हीं को सौंपा गया। मन्दिर का अर्द्धनिर्माण हुआ होगा कि उसी समय श्रीमान् रुद्रेश्वर सिंह बहादुर के ज्येष्ठपुत्र महेश्वर सिंह के शुभ विवाहोत्सव का समाचार सुनकर, कन्हाई झा आवश्यक सामग्री साथ ले साथियों के साथ काशी से नाव के द्वारा गंगा के मार्ग से स्वदेश यात्रा के लिये चल पड़े। उसी समय काशी के दलाल शिवमन्दिर निर्माण में कन्हाई झा की व्यवस्था से मनोभिलाषित लाभ नहीं प्राप्त कर सके थे, इस कारण उनको कन्हाई झा पर रोष था, उस रोष को निकालने का यह सुअवसर देख

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दलालों ने भी नाव के द्वारा कन्हाई झा का पीछा किया। पीछा करते करते बहुत दूर निकल जाने के बाद मौका देखकर एक दिन रात्रि में कन्हाई झा को मार डालने की नीयत से आग लगा दी और भागे। परन्तु—"मनसा चिन्तितं-कार्यं दैवो अन्यत्र चिन्तयेत्" मनुष्य विचार करता है कुछ, और होता है कुछ और, ठीक उसी प्रकार हुआ जैसे—"जाको राखे साईयाँ ताको मार सकै ना कोय।" कन्हाई झा ने आवश्यक सामान और धन बंधवाकर विद्यार्थी और भृत्य को देकर, ऐसी महान् विषम परिस्थिति में पड़कर भी, किंकर्त्तव्य विमूढ़ न होकर, संकट हारिणी, पालन कर्त्री, जगज्जननी, माँ गंगा की शरण ले, प्रवाह पतित हो निकल पड़े। प्रवाह द्वारा तैरते-तैरते पटना पहुँचे, नांव में आग की लपटों के कारण शरीर, चेहरा कुछ झुलस गया था, जिसमें पानी के कारण, चेहरे में कुछ वैचित्र्य आकर, रूप कुछ बीभत्स हो गया था। कन्हाई झा जिस समय पटना पहुँचे, उस समय श्रीमान् रुद्रबहादुर सिंह वहीं थे। जब उनको काशा से कन्हाई झा के आने का समाचार मालूम हुआ सुनते ही तो उनको स्नेह भोजन के लिये निमंत्रित किया। कन्हाई झा भी सस्नेह भाजन के लिये विकृत मुँह लिये ही श्रीमान् के समक्ष पहुँचे। श्रीमान् ने उनके विकृत मुँह को देखकर व्यग्र हो, उनके दुःखद समाचार को सुनकर निर्मित हो रहे शिवमन्दिर में बाधा और यह कार्य एक प्रकार से अमङ्गल अपशकुन समझकर उसके निर्माण को रोक दिया। इस प्रकार मन्दिर का निर्माणकार्य महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह तक रुका रहा।

महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह ने उसका पुनर्निर्माण कराकर उसमें उन्ही के नाम से (महाराज रुद्रबहादुर सिंह के) श्रीरुद्रेश्वर शिव जी की स्थापना कर अपने पूर्वजों के मनः संकल्पित कार्य को पूर्ण किया। तदनुसार कुछ काल के बाद उसी स्थान में एक संस्कृत विद्यालय (निगमागम विद्यालय के नाम से) स्थापित हुआ जिसमें तीन व्यक्ति वैदिक ऋक्सामाथर्वगेत्ता बीस-बीस रुपया मासिक देकर नियुक्त किये गये। विद्यार्थियों को वृत्ति भी प्रतिवर्ग में दो जाने लगी। यहाँपर खेद का विषय है कि आगम का स्थान (तन्त्र) अद्यावधि रिक्त ही रहा, जिस आगम के आचार्य स्वयं श्रीमान् थे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीमान् महाराज स्वयं श्रौतस्मार्त्त कर्मानुष्ठानों का आचरण करते हुये श्रौतप्रिय भी थे। जिनकी श्रौत प्रियता का दृष्टान्त प्रत्यक्ष ही है कि जिन्होंने काशी में अपने प्रतिनिधि रूप में एक अग्निहोत्र तत्कालीन मीमांसक म० म० सुब्रह्मण्य शास्त्री द्राविड़ द्वारा स्थापित किया। उनके अग्निहोत्र कार्य के लिये एक मकान जो (गोविन्दजी नायक लेन में अभीतक विद्यमान था) तथा सौ रुपया मासिक प्रदान करते थे।

इस विद्यालय की प्राचीनता के सम्बन्ध में और भी उद्धरण प्राप्त होते हैं जैसे—महाराजाधिराज लक्ष्मीश्वर सिंह को राज्याधिकार प्राप्त होने के बाद श्री विशुद्धानन्द सरस्वती जो को पांच सौ रुपया मासिक धर्म कार्य और निज सेवार्थ देनेलगे जो आजीवन उनको देते थे, वे उसमें से भुवनेश्वरी (सरस्वती) फाटक के निकट एक कमान किराये पर लेकर उसमें अनेक अध्यापक—म० म० शिवकुमार मिश्र, म० म० जयदेव मिश्र, संगलाल झा, दुःखभञ्जन तथा कवि तथा म० म० प्रमथनाथ भट्टाचार्य, श्री बाबाजी झा, श्रीनाथ झा (ज्योतिषी) आदित्यराम सामर्ग्वदी, इनको पूर्ण मासिक देकर दरभंगा पाठशाला नाम की पाठशाला स्थापित कर उपरोक्त विद्वानों की नियुक्तियाँ की जिसमें यथोचित मासिक वृत्ति विद्यार्थियों को भी प्राप्त होती थी, जिस विद्यालयके विद्वान अध्यापक एवं छात्र सर्वत्र श्रीमान का नाम और अपना गैदुप्य समुज्वल किये। जो आज संप्रति स्थगित होने के कारण विद्वत् समाज के मनोदुःख का निदान हो गया है।

म० म० श्रीमुकुन्द झा बख्शी लिखित "मिथिलाभाषामय इतिहास" से उद्धृत एवं श्रीकृष्णमोहन ठाकुर के सौजन्य से प्राप्त।



Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्राय
भरतनिधि, क

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi